

राकेश चंद्र नारायण

बनाम

बिहार राज्य

27 सितंबर, 1988

[रंगनाथ मिश्रा और एम. एन. वेंकटचलैया, न्यायमूर्तिगण]

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 32-जनहित याचिका-मानसिक अस्पताल रांची-मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी की प्रतिवेदन- विचार किया गया-अस्पताल के लिए नियुक्त प्रबंधन समिति।

रांची स्थित मानसिक अस्पताल के संबंध में दायर एक याचिका पर संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत जनहित याचिका के रूप में विचार किया गया और न्यायालय ने बिहार राज्य को अपना प्रति-शपथपत्र प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। साथ ही, न्यायालय ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी को अस्पताल का दौरा करने और वहां की स्थिति के बारे में प्रतिवेदन प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। अस्पताल का पूर्ण प्रबंधन बिहार राज्य के स्वास्थ्य विभाग के अधीन था। बिहार राज्य को पश्चिम बंगाल और उड़ीसा राज्यों से प्रत्येक राज्य के लिए आरक्षित बिस्तरों की संख्या के आधार पर वित्तीय सहायता प्राप्त होती थी।

मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा प्रस्तुत प्रतिवेदन अत्यंत चिंताजनक थी। बिहार राज्य द्वारा प्रस्तुत शपथपत्र में कहा गया था कि सरकार को स्थिति की जानकारी थी और उसने अस्पताल के कामकाज में सुधार के लिए कुछ कदम उठाए थे, साथ ही बेंगलुरु के एन.आई.एम.एच.ए.एन.एस. की तर्ज पर अस्पताल के विकास की योजना भी बनाई थी।

समय-समय पर न्यायालय ने बेहतर भोजन, वस्त्र, चिकित्सा उपचार, आवास और स्वच्छता में सुधार आदि के प्रावधान के संबंध में निर्देश और विशिष्ट आदेश जारी किए थे।

मामले को लंबित रखते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: (1) एक कल्याणकारी राज्य में प्रत्येक नागरिक को चिकित्सा सुविधा प्रदान करना राज्य का दायित्व है। राज्य को अपने दायित्व का निर्वाह करना होगा और तत्कालीन सरकार को अस्पतालों को सर्वोत्तम मानकों के अनुसार संचालित करके और रोगियों की उचित सेवा करके अपने कर्तव्यों का पालन करना होगा। [318 डी-ई]

(2) यह स्पष्ट है कि इस न्यायालय द्वारा दिए गए कई आदेशों और बिहार राज्य सरकार द्वारा दिए गए आश्वासनों के बावजूद, कमियों को दूर नहीं किया जा रहा था। अस्पताल में व्याप्त दयनीय स्थिति के बारे में सरकारी अधिकारियों की जागरूकता, जैसा कि न्यायालय को प्रस्तुत योजना में स्वीकार किया गया है, न्यायालय द्वारा समय-समय पर दिए गए निर्देशों का प्रभावी ढंग से पालन न करना और इस मामले में निष्क्रियता से स्पष्ट संकेत मिलता है कि इस संस्था को इतने बड़े मानसिक अस्पताल के रूप में तब तक नहीं चलाया जा सकता जब तक कि प्रशासनिक व्यवस्था में बदलाव न हो, नियंत्रण में परिवर्तन न हो और संस्था को रोगी-केंद्रित सेवा पर नया बल न दिया जाए। [318 बी-सी]

(3) न्यायालय को प्रस्तुत की गई योजना अपूर्ण थी और उसमें कुछ स्पष्ट कमियों और खामियों को दूर करने के अलावा कोई सुधार लाने का प्रयास नहीं किया गया था। न्यायालय ने पुनर्चना की योजना की अपेक्षा की थी, जिसे इस योजना में दूर-दूर तक भी नहीं छुआ गया। [318 एफ-जी]

(4) राज्य सरकार के अधिकारी प्राथमिकताओं का आकलन करने में सक्षम नहीं रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि मामले को संभालने वाले व्यक्तियों की ओर से वातावरण में सुधार लाने में जरा भी रुचि नहीं है। इन परिस्थितियों में, यदि संस्था को एक अच्छे और उपयोगी अस्पताल के रूप में चलाना है, तो प्रबंधन को पूरी तरह से बिहार राज्य के स्वास्थ्य विभाग को सौंपना कठिन है। पश्चिम बंगाल और उड़ीसा राज्यों का प्रबंधन में सहयोग कुछ सकारात्मक परिणाम ला सकता है। इसलिए, यह कहीं बेहतर होगा यदि संस्था के सभी

पहलुओं की देखरेख के लिए पूर्ण शक्तियों के साथ एक प्रबंधन समिति नियुक्त की जाए।

[319 ए; बी-डी]

(5) न्यायालय ने तदनुसार मानसिक अस्पताल के लिए एक प्रबंधन समिति का गठन किया और सहभागी राज्यों से वित्तीय योगदान के संबंध में निर्देश दिए, तथा अस्पताल के संचालन और प्रबंधन के संबंध में दिशानिर्देश भी निर्धारित किए। न्यायालय ने आगे निर्देश दिया कि समिति शीघ्र ही अस्पताल को बेंगलोर में एन.आई.एम.एच.ए.एन.एस. द्वारा संचालित अस्पताल के अनुरूप परिवर्तित करने की संभावना तलाशने के लिए कदम उठाए।

[321 सी-डी]

मूल क्षेत्राधिकार: 1986 की विनिर्दिष्ट आदेश याचिका (दीवानी) संख्या 339

(भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के अंतर्गत)।

याचिकाकर्ता की ओर से एस.पी. पांडे और श्रीमती रेखा पांडे उपस्थित हुए।

उत्तरदाता की ओर से जे.आर. दास, डी.के. सिन्हा, डी.गोबरधन और आर.के. मेहता उपस्थित हुए।

न्यायालय का निर्णय

न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्रा द्वारा सुनाया गया। बिहार राज्य के रांची के निकट कांके स्थित मानसिक अस्पताल के संबंध में पटना के दो नागरिकों द्वारा इस न्यायालय के माननीय मुख्य न्यायाधीश को लिखे गए पत्र को जनहित याचिका के रूप में विचार किया गया और संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत आवेदन के रूप में पंजीकृत किया गया। दिनांक 7.4.1986 को, इस न्यायालय ने बिहार राज्य को अपना प्रति-शपथपत्र दाखिल करने का निर्देश दिया और रांची के मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी या उनके द्वारा नामित किसी अन्य न्यायिक दंडाधिकारी को अस्पताल का दौरा करने और वहां की स्थिति के बारे में प्रतिवेदन प्रस्तुत करने का निर्देश दिया।

मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने दिनांक 8.6.1986 को अस्पताल का दौरा किया और उसके बाद कई अन्य अवसरों पर भी दौरा किया तथा 15 जुलाई, 1986 को एक विस्तृत प्रतिवेदन प्रस्तुत की। उन्होंने पाया कि अस्पताल में 1580 बिस्तर थे। अस्पताल का पूर्ण प्रबंधन बिहार राज्य के स्वास्थ्य विभाग के अधीन था। राज्य को पश्चिम बंगाल और उड़ीसा से वित्तीय योगदान प्राप्त होता था। अस्पताल की एक प्रबंध समिति है जिसमें कुल 14 सदस्य हैं और दक्षिण छोटानागपुर प्रमंडल के आयुक्त इसके अध्यक्ष हैं। चिकित्सा अधिकारियों की स्वीकृत संख्या 16 थी लेकिन केवल 9 पद भरे गए थे और 7 रिक्तियां थीं। अस्पताल में पुरुष रोगी विंग में कुल 10 ब्लॉक थे, इसके अलावा आइसोलेशन वार्ड, मेडिकल वार्ड और इन्फर्मरी वार्ड भी थे। ये 10 दो मंजिला ब्लॉकों और तीन एक मंजिला वार्डों में स्थित हैं, जिनका प्रबंधन अलग-अलग डॉक्टरों द्वारा किया जाता है। महिला रोगियों की इकाई में दो दो मंजिला और दो एक मंजिला ब्लॉक थे। प्रत्येक ब्लॉक में 120 रोगियों की क्षमता थी। कुछ रोगियों को अपने इलाज के लिए भुगतान करना पड़ता था, जबकि सामान्य वर्ग के रोगियों का इलाज निःशुल्क था। परिसर में चिकित्सा अधिकारियों के लिए बने तीनों आवासीय क्वार्टर अन्य लोगों द्वारा उपयोग किए जा रहे थे, जिनमें से एक में निलंबित अधीक्षक, दूसरे में सेवानिवृत्त अधीक्षक और तीसरे में कार्यवाहक अधीक्षक रह रहे थे। तीन डॉक्टर गैर-राजपत्रित अधिकारियों के लिए बने क्वार्टरों में रह रहे थे और शेष डॉक्टर लगभग 11 किलोमीटर दूर रांची में निजी घरों में रह रहे थे।

मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने पाया कि अस्पताल में पानी की भारी कमी थी। अस्पताल परिसर में केवल एक ट्यूबवेल था जो पुरुष ब्लॉक में स्थित था। पाँच साधारण कुएँ थे लेकिन उनमें से किसी में भी मोटर पंप नहीं लगा था। ये कुएँ ही पानी की आपूर्ति का एकमात्र स्रोत थे। अस्पताल को स्थायी आधार पर पानी की आपूर्ति के लिए राज्य सरकार को कई बार आवेदन दिए गए थे, लेकिन सरकार की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं मिली।

मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी यह देखकर आश्चर्यचकित रह गए कि अस्पताल परिसर के किसी भी शौचालय की हालत ठीक नहीं थी। शौचालय के फिटिंग जाम हो गए थे और काम नहीं कर रहे थे। इसलिए मरीजों को पास के खुले मैदान में शौच करने के लिए मजबूर होना पड़ा। परिणामस्वरूप, वातावरण प्रदूषित और अस्वच्छ हो गया था। यद्यपि कुछ स्थानों पर पंखे के पॉइंट थे और छत से बिजली के पंखे भी लटके हुए थे, अधीक्षक के कक्ष में लगे पंखे को छोड़कर कोई भी पंखा चालू हालत में नहीं था। उन्होंने यह भी पाया कि बल्ब और ट्यूब सहित बिजली के कनेक्शन होने के बावजूद रोशनी उपलब्ध नहीं थी, जिसके कारण शाम से सुबह तक परिसर में घोर अंधेरा छाया रहता था। अधीक्षक ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी को बताया कि अस्पताल में कोई बिजली मिस्त्री नहीं है और संस्थान को राज्य विद्युत बोर्ड की दया पर निर्भर रहना पड़ता है, और पत्राचार के बावजूद कोई जवाब नहीं मिला।

उन्होंने पाया कि 1925 में पुराने लोहे के पलंग उपलब्ध कराए गए थे और खरीद के माध्यम से केवल 300 और पलंग जोड़े गए थे। कुल रोगियों की संख्या 1580 थी। अधिकांश लोहे के पलंग टूटे हुए थे और उपयोग में नहीं थे, इसलिए वास्तव में केवल 300 बिस्तर ही उपलब्ध थे।

किसी भी वार्ड में दरवाजे और खिड़कियां ठीक से काम नहीं कर रही थीं। अधीक्षक ने उन्हें बताया कि उन्होंने राज्य सरकार के लोक निर्माण विभाग से बार-बार अनुरोध किया था, लेकिन किसी भी पत्र का जवाब तक नहीं मिला था। दरवाजे और खिड़कियां बंद करने की व्यवस्था न होने के कारण कई बार मानसिक रूप से बीमार मरीज खिड़कियों से कूद गए थे या कमरों से भाग गए थे। ऐसी स्थितियों से निपटने के लिए, टूटे हुए पलंगों का उपयोग ज्यादातर रास्तों को अवरुद्ध करने के लिए किया जाता था।

मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने आगे पाया कि गद्दे और चादरें बहुत खराब हालत में थीं। उन्होंने देखा कि कई मरीज नंगी ज़मीन पर लेटे हुए थे; कुछ मरीज एक ही कंबल का इस्तेमाल गद्दे और ओढ़ने दोनों के रूप में कर रहे थे। कुछ मरीज कपड़े न होने के कारण

नग्न थे और कुछ फटी हुई कमीज़ और पैंट पहने हुए थे। मच्छरदानी उपलब्ध नहीं थी; तकिए भी नहीं दिए गए थे और मरीजों को उनके हाल पर छोड़ दिया गया था। मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने मरीजों के शरीर पर कीड़े-मकोड़ों के काटने के निशान और मच्छरों के काटने के निशान देखे। कपड़ों की कमी के कारण मरीज पानी की अनुपलब्धता के चलते चार से छह सप्ताह तक बिना धोए एक ही कमीज़ और पैंट पहनने के लिए मजबूर थे। अधीक्षक ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी को बताया कि बिहार सरकार ने दो वक्त के भोजन और नाश्ते के लिए प्रति मरीज 3 रुपये प्रतिदिन स्वीकृत किए थे, जो पूरी तरह अपर्याप्त था। प्रबंध समिति ने प्रति मरीज प्रति दिन 10 रुपये स्वीकृत करने की सिफारिश की थी, लेकिन कोई प्रतिक्रिया नहीं मिली। निर्धारित आहार में प्रतिदिन एक अंडा, 250 ग्राम दूध और सप्ताह में एक बार मांस और मछली शामिल थे, लेकिन पर्याप्त धन की कमी के कारण इन्हें वर्षों से बंद कर दिया गया था।

मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने कई बार उस स्थान का दौरा किया और पाया कि दवाओं के स्टॉक का कोई हिसाब-किताब नहीं था; रेफ्रिजरेटर की अनुपस्थिति में जीवन रक्षक दवाओं का उचित भंडारण नहीं किया गया था। उपकरण कार्यशील स्थिति में नहीं थे और उपकरणों को चलाने के लिए नियुक्त कर्मचारी अपना समय व्यर्थ व्यतीत कर रहे थे। अब मरीजों को आवश्यकतानुसार एक्स-रे और ई.सी.जी. के लिए रांची स्थित मेडिकल कॉलेज अस्पताल भेजा जा रहा था। कई मरीजों ने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी को बताया कि उन्हें महीनों से कोई दवा नहीं मिल रही है।

मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने देखा कि कई दिनों से अस्पताल में कई डॉक्टर अनुपस्थित थे। वार्ड में भर्ती कुछ मरीजों ने उनसे शिकायत की कि डॉक्टर सप्ताह में एक घंटे के लिए भी वार्ड में नहीं आते। उन्हें एक कमजोर और दुबला-पतला मरीज मिला जिसने बताया कि उसे दो दिनों से दस्त का बहाना बनाकर खाना नहीं दिया गया था और उसका इलाज भी नहीं किया गया था। 11 जुलाई, 1980 को जब वे स्थानीय अतिरिक्त जिला

दंडाधिकारी के साथ अस्पताल गए, तो उन्होंने पाया कि उस समय सभी डॉक्टरों को परिसर में इयूटी पर होना चाहिए था, लेकिन वहां एक भी डॉक्टर मौजूद नहीं था। हालांकि स्थिति कुछ और थी, लेकिन उपस्थिति पंजिका में इयूटी चार्ट के अनुसार सभी डॉक्टर उपस्थित दिखाए गए थे।

मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने अधीक्षक से 1977 से 1986 की अवधि के लिए मृत्यु दर के आंकड़े एकत्र किए, जिनका विवरण नीचे दिया गया है:

वर्ष	पुरुष	महिला	कुल
1977	38	11	49
1978	72	12	84
1979	74	31	105
1980	66	24	90
1981	39	33	172
1982	173	50	231
1983	87	44	131
1984	152	94	246
1985	90	69	159
1-1-1986 से 30-6-1986	49	25	74

प्रतिवेदन के कंडिका 28 में मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने कहा:

"यह चार्ट 1980 के बाद मृत्यु दर के ग्राफ में अचानक वृद्धि को स्पष्ट रूप से दर्शाता है। 1984 आरोग्यशाला के लिए सबसे दुर्भाग्यपूर्ण वर्ष था, जब अधिकतम मरीज भागे और उनकी मृत्यु हुई। 1984 में मरीजों के बड़े पैमाने

पर भागने और उनकी मृत्यु का कारण आरोग्यशाला परिसर में आंतरिक राजनीति को बताया जाता है, जिसके लिए तत्कालीन अधीक्षक डॉ. दुर्गा भगत और उप अधीक्षक डॉ. बी.बी. सिंह को काफी हद तक जिम्मेदार माना जाता है।"

दंडाधिकारी ने आगे बताया कि वर्तमान कार्यवाहक अधीक्षक प्रशासन में सुधार लाने में विफल रहे हैं। उनका अपने सहयोगियों और कर्मचारियों पर पर्याप्त नियंत्रण नहीं है। निवर्तमान अधीक्षक, जो परिसर में ही रहते हैं, लोगों को भड़का रहे थे और कार्यवाहक अधीक्षक धीरे-धीरे प्रशासन पर अपना नियंत्रण खो रहे थे। निर्दोष, दयनीय और बेबस मरीज इस स्थिति के शिकार थे। अस्पताल में प्रचलित प्रथा यह थी कि केवल अधीक्षक ही मरीजों को भर्ती करने के लिए सक्षम थे और इस प्रकार अस्पताल में भर्ती होने के इच्छुक मरीजों के अभिभावकों और परिचारकों का अधीक्षक के कुछ मित्रवत लोगों द्वारा शोषण किया जाता था और जो लोग अधीक्षक से सहमत नहीं होते थे, उन्हें अस्पताल के लाभों से वंचित कर दिया जाता था। इससे टकराव और अप्रिय संबंध उत्पन्न हुए। उन्होंने सिफारिश की कि यदि संभव हो तो किसी गैर-चिकित्सक, जैसे सेवानिवृत्त सेना अधिकारी या जिला न्यायाधीश को अस्पताल के प्रमुख के रूप में नियुक्त किया जाए ताकि वे स्थिति को संभाल सकें और बिगड़ती स्थिति को सुधार सकें। उन्होंने पाया कि अस्पताल से लगा हुआ एक बड़ा बगीचा था, लेकिन सर्वव्यापी कुप्रबंधन के कारण उससे कोई उपज नहीं मिल रही थी, लेकिन हाल ही में डॉ. बुक्सी को बगीचे का प्रभार सौंपा गया था और उन्होंने उसमें सुधार किया था।

अपने प्रतिवेदन के अंत में उन्होंने इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाया कि कुछ मरीज जो ठीक हो चुके थे—जिनकी संख्या लगभग 300 थी, जिनमें पुरुष और महिलाएँ दोनों शामिल थीं—किसी भी सुविधा के अभाव में न तो अपने परिवारों में लौट पा रहे थे और न ही कोई रोजगार कर पा रहे थे। उन्होंने पाया कि जिन व्यक्तियों को अब उपचार की आवश्यकता नहीं है, उन्हें अस्पताल से हटा दिया जाना चाहिए ताकि उपचार की आवश्यकता

वाले रोगियों के लिए जगह उपलब्ध हो सके; इससे इतनी बड़ी संख्या में लोगों पर अनावश्यक खर्च से बचा जा सकेगा और संस्थान के भीतर अनुशासन के स्तर में सुधार किया जा सकेगा तथा समग्र वातावरण को बेहतर बनाया जा सकेगा।

प्रतिवेदन के साथ उन्होंने अनुलग्नकों में कई प्रासंगिक विवरण दिए। अनुलग्नक-11 उन आपराधिक रोगियों की सूची है, जो विभिन्न जेलों से इलाज के लिए आए थे और जिन्हें छुट्टी के लिए स्वस्थ घोषित किया गया था।

हम रूपा संधाल के मामले का उल्लेख कर सकते हैं। इस व्यक्ति को 28.9.1947 को चटगांव हिल ट्रैक्ट जेल के अधीक्षक के अनुरोध पर अस्पताल में भर्ती कराया गया था, जहां चटगांव हिल ट्रैक्ट के उपायुक्त द्वारा धारा 326 भारतीय दंड संहिता के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराए जाने पर उन्हें सजा काटनी पड़ रही थी। जाहिर है कि उन्हें धारा 326 भारतीय दंड संहिता के तहत अपराध के लिए 41 वर्ष तक जेल में नहीं रखा जा सकता था। अस्पताल से कई पत्र भेजे गए लेकिन कोई जवाब नहीं मिला। हम मधु महंत के मामले का भी उल्लेख कर सकते हैं, जिन्हें 15.11.1950 को अधीक्षक, जिला जेल, क्यॉंझर, उड़ीसा राज्य के अनुरोध पर अस्पताल में भर्ती कराया गया था। उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत दोषी ठहराया गया था और वे कई वर्ष पहले ठीक हो जाने के बावजूद 36 वर्षों से अस्पताल में भर्ती थे। दंडाधिकारी ने इस श्रेणी के 13 व्यक्तियों की सूची दी है।

हमें यह जानकर आश्चर्य हुआ कि जब कैदियों को उन जेलों से इलाज के लिए स्थानांतरित किया जाता है जहाँ वे कारावास की सजा काट रहे थे, तब भी जेलों द्वारा कोई अनुवर्ती कार्रवाई नहीं की गई और यहाँ तक कि जब अस्पताल अधिकारियों ने कैदियों को वापस लेने का अनुरोध किया, तब भी कोई प्रतिक्रिया नहीं दी गई। यह केवल पूर्ण संवेदनहीनता को दर्शाता है। हमने मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी की प्रतिवेदन से विस्तृत अंश दिए हैं ताकि मानसिक अस्पताल में व्याप्त भयावह और बर्बर स्थितियों का यथासंभव स्पष्ट चित्र प्रस्तुत किया जा सके। इसमें कोई दो राय नहीं हो सकती कि अस्पताल की हालत

ओलिवर ट्विस्ट के अनाथालय से भी बदतर थी। सभी प्रतिवेदनों से, शायद, कई चिड़ियाघरों में जानवरों की स्थिति इस अस्पताल की तुलना में बेहतर है। जबकि मानसिक रूप से बीमार लोगों को इलाज के लिए एक शांत वातावरण की आवश्यकता होती है, जैसा कि मनोचिकित्सक कहते हैं, बिहार राज्य ने एक समय के प्रतिष्ठित मानसिक अस्पताल को लगभग सोलह सौ रोगियों को रखने के लिए एक अड्डा बना दिया है। मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी की प्रतिवेदन पाठक को मध्ययुगीन यातनागृह का आभास कराती है।

दिनांक 11.8.1986 को न्यायालय ने प्रतिवेदन पर ध्यान दिया और टिप्पणी की:

"प्रतिवेदन को पढ़ना बेहद कष्टदायक है और इससे पता चलता है कि इस संस्था का प्रबंधन कितना खराब है और मरीजों को वहां किस अमानवीय स्थिति में रहने और काम करने के लिए मजबूर किया जाता है। यह आश्चर्यजनक है कि बिहार सरकार ने इस संस्था को इस स्थिति तक पहुंचने दिया है। यह आवश्यक है कि इस संस्था के कामकाज में हर तरह से सुधार लाने के लिए तत्काल कदम उठाए जाएं। इसलिए हम बिहार सरकार के मुख्य सचिव और स्वास्थ्य सचिव को शपथपत्र दाखिल करने का निर्देश देते हैं, जिसमें संस्था के कामकाज में सुधार लाने और प्रतिवेदन में बताई गई कमियों और खामियों को दूर करने के लिए एक निश्चित योजना प्रस्तुत की जाए, जिसमें संस्था से जुड़े चिकित्सा अधीक्षक द्वारा मरीजों की उपेक्षा भी शामिल है। यह मामला अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह मानसिक रूप से विकलांगों के कल्याण से संबंधित है। इसलिए हम निर्देश देते हैं कि संस्था के कामकाज में सुधार के लिए समयबद्ध कार्यक्रम प्रस्तुत करते हुए आज से तीन सप्ताह के भीतर शपथपत्र दाखिल किया जाए। हम यह कहना चाहेंगे कि मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने अपने कार्य को उत्कृष्ट ढंग से निभाया है और हम उनके द्वारा

किए गए कार्य के लिए अपनी प्रशंसा व्यक्त करते हैं। ये टिप्पणियाँ पटना उच्च न्यायालय और मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी को भेजी जा सकती हैं।”

दिनांक 1.9.1986 को स्वास्थ्य सचिव ने अस्पताल के सुधार के लिए एक योजना के साथ एक संक्षिप्त शपथपत्र प्रस्तुत किया। योजना के शुरुआती शब्दों को उद्धृत करना ही विश्वास करने योग्य है:

“बिहार सरकार कांके स्थित मानसिक आरोग्यशाला की मौजूदा स्थिति से अवगत है और सरकार कुछ समय से इसके सुधार के लिए उठाए जाने वाले उपायों पर चर्चा कर रही है। इस विषय पर बिहार राज्य के प्रतिनिधियों ने योजना आयोग के सदस्यों के साथ जनवरी 1986 में नई दिल्ली में आयोजित एक बैठक में चर्चा की थी और तदनुसार रांची स्थित मानसिक आरोग्यशाला को बेंगलोर के एन.आई.एम.एच.ए.एन.एस. की तर्ज पर विकसित करने की परिकल्पना की गई है...”

योजना में उल्लेख किया गया है कि 17 अप्रैल, 1986 को बेंगलोर स्थित एन.आई.एम.एच.ए.एन.एस. के निदेशक को सूचना हेतु एक पत्र लिखा गया था, यानी योजना को इस न्यायालय में प्रस्तुत किए जाने से साढ़े चार महीने पहले। इस बात का कोई संकेत नहीं है कि निदेशक से क्या प्राप्त हुआ या साढ़े चार महीनों के दौरान आगे क्या कार्रवाई की गई। योजना में उल्लेख किया गया है कि स्वीकृत 16 पदों में से तीन पद पश्चिम बंगाल सरकार के लिए आरक्षित थे और रिक्त थे; 13 पदों में से 9 भरे जा चुके थे और 4 रिक्त थे जिन्हें अक्टूबर, 1986 तक भरा जाना था। योजना में जल आपूर्ति प्रणाली के संदर्भ में स्वीकार किया गया कि आंतरिक प्रणाली अवरुद्ध थी और काम नहीं कर रही थी। वर्ष 1985-86 में जल आपूर्ति प्रणाली के नवीनीकरण के लिए 10 लाख रुपये स्वीकृत किए गए थे और लोक स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग वित्तीय वर्ष के दौरान केवल 61,000 रुपये का उपयोग

कर सका; इसलिए, शेष 9,39,000 रुपये की राशि को वर्ष 1986-87 में फिर से स्वीकृत किया जाना था।

शौचालय और स्नानघर स्वीकृत स्थिति में नहीं थे और प्रस्तावित योजना के अनुसार अस्पताल के अधीक्षक स्वच्छता व्यवस्था की देखरेख करेंगे।

बिजली के संबंध में यह बताया गया था कि बिजली के फिटिंग, फिक्स्चर और अन्य उपकरण मार्च 1987 तक बदल दिए जाएंगे, जिसका अर्थ है योजना तैयार होने की तारीख से छह महीने बाद। यह प्रस्तावित किया गया था कि 100 केवी का जनरेटर सेट लगाया जाएगा। पलंग और गद्दों के संबंध में यह बताया गया था कि 400 पलंग और गद्दे 1986-87 में और शेष 1987-88 में खरीदे जाएंगे। यह बताया गया था कि दरवाजों और खिड़कियों को पूरी तरह से बदलने की आवश्यकता है, और यह बताया गया था कि मरम्मत कार्य के लिए वित्तीय वर्ष के दौरान छह लाख रुपये स्वीकृत किए गए थे। आहार के संबंध में योजना में यह बताया गया था:

“बिहार राज्य में, अस्पताल में भर्ती प्रत्येक रोगी के लिए आहार की दर 3.00 रुपये प्रतिदिन है, सिवाय टीबी के रोगी के, जिसके लिए आहार की दर 4.15 रुपये प्रतिदिन है। वर्ष 1986-87 में, प्रति रोगी आहार की दर बढ़ाकर 3.55 रुपये कर दी गई है। कांके अस्पताल के अधीक्षक को आहार प्रबंधन में सुधार करने का निर्देश दिया गया है।”

यह स्वीकार किया गया कि ई.सी.जी. मशीन खराब थी और इस वित्तीय वर्ष में मशीन को स्थापित करने के प्रयास किए जाएंगे। योजना में यह भी प्रस्तावित किया गया था कि जल्द ही एक नियमित अधीक्षक की नियुक्ति की जाएगी। दवाओं की आपूर्ति के संबंध में यह बताया गया कि निर्धारित दर 1.00 रुपये प्रति रोगी प्रति दिन थी और इसे 1986 से बढ़ाकर 1.90 रुपये प्रति रोगी प्रति दिन कर दिया गया है। 20 अक्टूबर, 1986 को इस न्यायालय ने निम्नलिखित आदेश दिया:

"1. रांची मानसिक आरोग्यशाला में प्रत्येक रोगी के लिए आहार का दैनिक आवंटन मौजूदा अपर्याप्त मात्रा से बढ़ाया जाएगा और प्रत्येक रोगी को उस मूल्य की अपर्याप्त वस्तुएं प्रदान की जाएंगी।

2. अस्पताल में पर्याप्त मात्रा में शुद्ध पेयजल की आपूर्ति के लिए तत्काल व्यवस्था की जानी चाहिए, यदि आवश्यक हो, तो बाहर से पीने योग्य पानी लाने के लिए पानी के टैंकों की व्यवस्था की जानी चाहिए।

3. अस्पताल की प्रयोगशालाओं और स्नानघरों में उचित स्वच्छता की स्थिति बहाल करने के लिए तत्काल व्यवस्था की जानी चाहिए।

4. अस्पताल में भर्ती सभी मरीज जिनके पास इस समय गद्दे और कंबल नहीं हैं, उन्हें आज से 15 दिनों के भीतर तुरंत उपलब्ध कराए जाने चाहिए। जिन मरीजों को खाट नहीं दी गई है, उन्हें भी आज से छह सप्ताह के भीतर खाट उपलब्ध कराई जानी चाहिए ताकि इसके बाद कोई भी मरीज खाट के बिना न रहे।

5. प्रत्येक मरीज के लिए दवाओं की लागत पर वर्तमान में लागू अधिकतम सीमा तत्काल प्रभाव से हटा दी जाएगी और मरीजों को डॉक्टरों द्वारा लिखे गए नुस्खे के अनुसार, लागत की परवाह किए बिना, दवाएं उपलब्ध कराई जाएंगी।

6. राज्य सरकार तत्काल कदम उठाएगी अस्पताल के लिए एक योग्य मनोचिकित्सक और एक चिकित्सा अधीक्षक की नियुक्ति करने के लिए और उन्हें आज से छह सप्ताह के भीतर संस्थान में तैनात किया जाएगा और वे कार्यभार ग्रहण करेंगे।

रांची के मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, जिन्हें रजिस्ट्री द्वारा इस आदेश की एक प्रति भेजी जाएगी, तीन सप्ताह में एक बार अस्पताल का दौरा करेंगे

और इस न्यायालय को त्रैमासिक प्रतिवेदन प्रस्तुत करेंगे कि क्या हमारे द्वारा दिए गए उपरोक्त निर्देशों का अनुपालन किया जा रहा है।”

20 नवंबर, 1986 को स्वास्थ्य सचिव ने योजना के अंतर्गत आने वाले पहलुओं से संबंधित कार्यक्रम के बारे में एक प्रतिवेदन दी। इसमें बताया गया कि एन.आई.एम.एच.ए.एन.एस. से कोई जवाब नहीं मिला था, इसलिए जानकारी प्राप्त करने के लिए बिहार से एक अधिकारी भेजा गया था। रिक्त पदों पर चिकित्सा अधिकारियों की तैनाती कर दी गई थी; जल आपूर्ति और बिजली की व्यवस्था अभी बाकी थी। भवन की मरम्मत चल रही थी और अन्य पहलुओं पर ध्यान दिया जाना बाकी था। असैन्य शल्यचिकित्सक के श्रेणी के एक अधीक्षक की तैनाती कर दी गई थी।

मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने दिसंबर 1986 में एक और प्रतिवेदन प्रस्तुत की। उन्होंने कुछ सुधारों को देखते हुए यह भी बताया कि अस्पताल में 400 महिला मरीज थीं और केवल एक महिला डॉक्टर थी। कोई महिला मनोचिकित्सक या मनोवैज्ञानिक नहीं थी। अधीक्षक ने इस संबंध में सरकार को पत्र लिखा था, लेकिन कोई प्रतिक्रिया नहीं मिली।

14 सितंबर 1987 को न्यायालय ने पाया कि पश्चिम बंगाल राज्य अस्पताल के संचालन में योगदान के भुगतान में भारी बकाया था। बिहार राज्य के अधिवक्ता ने पश्चिम बंगाल राज्य को पखवाड़े भर के भीतर बकाया राशि का विवरण भेजने पर सहमति जताई और न्यायालय ने पश्चिम बंगाल सरकार को इसका भुगतान करने का निर्देश दिया।

पश्चिम बंगाल राज्य ने स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग के संयुक्त सचिव के माध्यम से अपना शपथपत्र दाखिल किया। शपथपत्र में यह स्वीकार करते हुए कि अस्पताल में 38% सीटें पश्चिम बंगाल के लिए आरक्षित हैं, यह आरोप लगाया गया कि बिहार राज्य द्वारा उचित लेखा-जोखा प्रस्तुत न किए जाने के कारण, पश्चिम बंगाल राज्य ने 1979-80 के

बाद समय पर अंशदान का भुगतान नहीं किया है। राज्य ने इस वर्ष 20 लाख रुपये और शेष राशि का भुगतान भविष्य में उचित किस्तों में करने पर सहमति व्यक्त की।

उड़ीसा राज्य ने अपने शपथपत्र में बताया है कि वह नियमित रूप से 3 लाख रुपये का अंशदान अदा कर रहा है और उस पर कोई बकाया नहीं है।

बिहार सरकार के उप निदेशक (चिकित्सा) स्वास्थ्य सेवाएँ ने शपथपत्र दाखिल कर दावा किया कि दिनांक 1.12.1986 से आहार की दर बढ़ा दी गई थी और सभी मरीजों को चावल, रोटी, दाल, सब्जी, अंडा, दूध, पाव रोटी, बिस्कुट, चाय और फल दिए जा रहे थे। मछली, मांस और चिकन सप्ताह में तीन बार बारी-बारी से दिए जा रहे थे। पुरानी पाइपलाइनें बदल दी गई थीं और पानी का प्रवाह बढ़ा दिया गया था; पानी के भंडारण की व्यवस्था कर दी गई थी। आवश्यकतानुसार दवाइयाँ बिना किसी सीमा के दी जा रही थीं। एक नई एक्स-रे मशीन खरीदी गई थी; पुरानी ई.सी.जी. मशीन को अनुपयोगी घोषित कर दिया गया था और एक नई मशीन खरीदी गई थी। याचिकाकर्ताओं में से एक ने शपथपत्र दाखिल कर उपरोक्त कई दावों का खंडन किया। 14 मार्च, 1988 को इस न्यायालय ने निम्नलिखित आदेश दिया:

“श्री सुबोध चंद्र नारायण द्वारा दायर शपथपत्र का हमने अध्ययन किया है। इसमें याचिकाकर्ताओं में से एक श्री सुबोध चंद्र नारायण द्वारा कई कुप्रबंधन के आरोप लगाए गए हैं। यह भी आरोप लगाया गया है कि इस न्यायालय के निर्देश के बावजूद कि प्रतिदिन के आहार का खर्च 10 रुपये प्रति रोगी होना चाहिए, वास्तव में 7 रुपये खर्च किए जा रहे हैं। इस न्यायालय ने निर्देश दिया था कि दवाओं पर 2 रुपये प्रति रोगी से अधिक खर्च की कोई सीमा नहीं होनी चाहिए, लेकिन यह निर्देश जारी नहीं किया जा रहा है। हमारा मानना है कि शपथपत्र की एक प्रति बिहार राज्य के मुख्य सचिव को भेजी जानी चाहिए और उन्हें निर्देश दिया जाना चाहिए कि वे इस मामले की व्यक्तिगत रूप से जांच करें और चार सप्ताह के भीतर एक प्रतिवेदन भेजें।”

दिनांक 14 मार्च, 1988 के आदेश में निर्धारित समय सीमा के बाद, मुख्य सचिव द्वारा एक प्रतिवेदन प्रस्तुत की गई, जिसे राज्य सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग के संयुक्त सचिव के शपथपत्र द्वारा समर्थित किया गया था। मुख्य सचिव ने प्रतिवेदन दी:

"पूरा अस्पताल परिसर एक विशाल क्षेत्र में फैला हुआ है। इमारतें पुरानी हैं, लेकिन उनकी व्यापक मरम्मत और सफेदी की गई है। कई पुराने पलंग, गद्दे, चादरें आदि नए से बदल दिए गए हैं। सरकार ने पिछले दो वर्षों में आरोग्यशाला के संचालन में सुधार के लिए कई लाख रुपये खर्च किए हैं। मेरे दौरे के दौरान, मैंने यह नहीं पाया कि मरीजों को अपर्याप्त भोजन या दवा दी जा रही थी।"

उन्होंने यह भी पाया कि शौचालयों की देखभाल नहीं की गई थी, जल आपूर्ति की स्थिति संतोषजनक नहीं थी, और स्वचालित बॉयलर की मरम्मत या प्रतिस्थापन अभी तक नहीं किया गया था। न्यायालय के 14 मार्च, 1988 के आदेश में कहा गया था कि सुबोध चंद्र नारायण द्वारा दायर शपथपत्र में कुप्रबंधन के कई आरोप शामिल थे और उन्हें मुख्य सचिव को भेजा जाना था, और इन आरोपों के संदर्भ में उन्हें अपनी प्रतिवेदन भेजनी थी। हमें नहीं लगता कि मुख्य सचिव की प्रतिवेदन में सभी पहलुओं को शामिल किया गया है। अस्पताल अधिकारी अपने हित में मुख्य सचिव के दौरे के दौरान अपनी कमियों को इतनी आसानी से उजागर नहीं करेंगे। इसलिए, यह कहना कि उन्होंने अपने दौरे के दौरान किसी भी मरीज को अपर्याप्त भोजन या दवा नहीं दी, स्थिति का सही आकलन नहीं है। लाखों रुपये सुधार पर खर्च किए जाने का कोई महत्व नहीं है जब तक कि आरोग्यशाला को स्वीकार्य अस्पताल मानकों पर बहाल नहीं किया जाता। प्रतिवेदन से यह आभास होता है कि मुख्य सचिव राज्य सरकार द्वारा किए गए व्यय के प्रति अधिक सजग थे, न कि वास्तविक स्थिति का आकलन करने के प्रति। उनकी प्रतिवेदन से स्पष्ट है कि इस न्यायालय द्वारा जारी किए गए कई आदेशों और बिहार राज्य सरकार द्वारा दिए गए आश्वासनों के बावजूद, कमियों का निवारण

नहीं किया जा रहा था। सरकारी अधिकारियों को अस्पताल में व्याप्त दयनीय स्थिति की जानकारी थी, जैसा कि इस न्यायालय को प्रस्तुत योजना में स्वीकार किया गया है। इस न्यायालय द्वारा समय-समय पर दिए गए निर्देशों का प्रभावी ढंग से पालन न करना और इस मामले में दिखाई गई सामान्य सुस्ती से हमारे मन में यह स्पष्ट धारणा बनती है कि इस संस्थान को इतने बड़े मानसिक अस्पताल के रूप में तब तक नहीं चलाया जा सकता जब तक कि प्रशासनिक व्यवस्था में परिवर्तन न हो, नियंत्रण प्रणाली में बदलाव न हो और संस्थान को रोगी-केंद्रित सेवा पर पूर्णतः नया बल न दिया जाए।

एक कल्याणकारी राज्य में—और हम मानते हैं कि बिहार राज्य स्वयं को ऐसा ही मानता है—राज्य का यह दायित्व है कि वह प्रत्येक नागरिक को चिकित्सा सुविधा प्रदान करे। इसलिए, मानसिक अस्पताल का संचालन नागरिकों के प्रति राज्य के दायित्व का निर्वहन है और यह तथ्य कि सार्वजनिक कोष से लाखों रुपये खर्च किए गए हैं (शायद बिना या अपर्याप्त प्रतिफल के) कोई मायने नहीं रखता। राज्य को अपने दायित्व का निर्वाह करना होगा और वर्तमान सरकार को अस्पताल को पूर्ण मानकों के अनुरूप संचालित करके और रोगियों की उचित सेवा करके अपने कर्तव्यों का पालन करना होगा। बिहार सरकार और उसके अधिकारियों की प्रतिवेदनों और शपथपत्रों (न्यायिक अधिकारियों द्वारा न्यायालय को प्रस्तुत प्रतिवेदनों को छोड़कर) से हमें उचित ईमानदारी का कोई प्रमाण नहीं मिला है।

न्यायालय को प्रस्तुत की गई योजना अपूर्ण थी और उसमें कुछ स्पष्ट कमियों और खामियों को दूर करने के अलावा कोई सुधार लाने का प्रयास नहीं किया गया था। यह अस्पताल स्वतंत्रता-पूर्व काल से अस्तित्व में है। मनोचिकित्सा और मनोरोगियों के उपचार के क्षेत्र में युगांतरकारी प्रगति हुई है। मानसिक स्वास्थ्य के प्रति दृष्टिकोण और मनोचिकित्सा की तकनीकें बदल गई हैं। मनोवैज्ञानिकों ने अपनी कला और उपकरणों का विकास किया है। मानसिक रूप से बीमार लोगों की देखभाल और ध्यान देने के तरीके में भी व्यापक परिवर्तन आया है। जब हमने बिहार राज्य से अस्पताल की स्थिति में सुधार के लिए एक योजना

प्रस्तुत करने का आह्वान किया था, तो इस न्यायालय का उद्देश्य पुराने अस्पताल की कमियों को दूर करने की योजना नहीं थी; हमारा वास्तव में उद्देश्य एक पुनर्रचनात्मक योजना की अपेक्षा करना था, जिसका इस योजना में दूर-दूर तक कोई उल्लेख नहीं था, सिवाय इसके कि बेंगलोर स्थित एन.आई.एम.एच.ए.एन.एस. से संपर्क किया गया है।

राज्य सरकार के अधिकारी प्राथमिकताओं का आकलन करने में असमर्थ रहे हैं। योजना के अनुसार मार्च 1988 के अंत तक बिस्तरों की व्यवस्था पूरी तरह से हो जानी चाहिए थी, लेकिन मुख्य सचिव की प्रतिवेदन और संलग्न शपथपत्र में इस स्थिति का स्पष्ट उल्लेख नहीं है। बिजली और पानी की व्यवस्था में भी बहुत समय लग गया है, जबकि ये दोनों जीवन की मूलभूत आवश्यकताएं हैं। मौजूदा शौचालयों की मरम्मत में दो वर्ष से अधिक का समय लगना प्रशासन पर कलंक है। इस मामले को संभालने वाले व्यक्तियों की ओर से वातावरण में सुधार लाने में जरा भी रुचि नहीं दिखाई देती। इन परिस्थितियों में, यदि इस संस्थान को एक अच्छे और उपयोगी अस्पताल के रूप में चलाना है, तो न्यायालय के लिए विश्वास के साथ प्रबंधन को बिहार राज्य के स्वास्थ्य विभाग को सौंपना कठिन हो जाता है।

हम इस बात से अवगत हैं कि न्यायालय के लिए किसी अस्पताल के प्रबंधन की निगरानी करना कठिन है, विशेषकर तब जब वह एक हजार किलोमीटर दूर स्थित हो; लेकिन चूंकि न्यायालय के हस्तक्षेप से कुछ सुधार हुए हैं, इसलिए इस स्तर पर पीछे हट जाना केवल यह सुनिश्चित करेगा कि न्यायालय का ध्यान हटते ही स्थिति फिर से बिगड़ जाएगी। जैसा कि हमने पहले ही बताया है, अस्पताल को उसकी पुरानी स्थिति में बहाल करना केवल एक पुरातन संस्था को जन्म देगा जिसमें आधुनिकता का अभाव होगा। हमारी राय में, यह कहीं बेहतर होगा यदि संस्था के सभी पहलुओं की देखरेख के लिए पूर्ण शक्तियों के साथ एक प्रबंधन समिति नियुक्त की जाए। यह ध्यान देने योग्य है कि इस संस्था को दो अन्य राज्यों से अंशदान प्राप्त होता है। इन बिस्तरों में से 38%, यानी लगभग 600, पश्चिम बंगाल राज्य के लिए आरक्षित हैं और पश्चिम बंगाल सरकार को इसके लिए भुगतान करना है। इसी प्रकार

75 बिस्तर उड़ीसा राज्य के लिए आरक्षित हैं और उड़ीसा सरकार द्वारा 3 लाख रुपये देय हैं। अस्पताल का प्रबंधन पूरी तरह से बिहार राज्य के स्वास्थ्य विभाग पर छोड़ने का कोई कारण नहीं है और इसमें भागीदार सरकारों को शामिल नहीं किया जाना चाहिए। अस्पताल के संबंध में बिहार राज्य प्रशासन के प्रदर्शन को ध्यान में रखते हुए, हमारा मानना है कि पश्चिम बंगाल और उड़ीसा राज्यों को प्रबंधन में शामिल करने से कुछ सकारात्मक परिणाम मिलने की संभावना है। इसलिए, हम मानसिक अस्पताल के लिए एक प्रबंधन समिति का गठन नीचे दिए गए तरीके से करेंगे।

अध्यक्ष- पटना उच्च न्यायालय, रांची बेंच के एक सहमत मौजूदा न्यायाधीश, जिनकी मनोनीत पटना उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश द्वारा की जाएगी।

सदस्य

- (1) रांची प्रमंडल आयुक्त
- (2) स्टेशन कमांडर, रामगढ़ क्षेत्र, रांची
- (3) स्वास्थ्य सचिव, बिहार सरकार
- (4) स्वास्थ्य सचिव, पश्चिम बंगाल सरकार
- (5) स्वास्थ्य सचिव, उड़ीसा सरकार
- (6) रांची के उपायुक्त
- (7) रांची मेडिकल कॉलेज के प्रधानाध्यापक
- (8) जिला न्यायाधीश, रांची
- (9) अस्पताल अधीक्षक

रांची प्रमंडल के आयुक्त और स्टेशन कमांडर उपाध्यक्ष होंगे और अध्यक्ष की अनुपस्थिति में, दिए गए क्रम में अध्यक्ष के रूप में कार्य करेंगे। अधीक्षक सचिव के रूप में कार्य करेंगे। हमें आशा है कि संबंधित सरकारें और प्राधिकरण मनोनीत अधिकारियों को समिति में कार्य करने के लिए आवश्यक सहमति/अनुमति प्रदान करेंगे और समिति नवंबर 1988 के पहले पखवाड़े

में अपनी पहली बैठक कर सकेगी। समिति को पहले छह महीनों में हर महीने बैठक करनी चाहिए ताकि कमियों और खामियों को अधिकतम छह महीने की समय सीमा के भीतर दूर किया जा सके और अस्पताल की स्थिति में हुए सुधारों की समीक्षा की जा सके। यदि समिति संतुष्ट है कि स्थिति में सुधार हुआ है, तो उसके बाद बैठकें त्रैमासिक हो सकती हैं। रांची प्रमंडल के आयुक्त प्रत्येक माह के अंत से दो सप्ताह के भीतर पहले वर्ष के दौरान अस्पताल की स्थिति के बारे में मासिक प्रतिवेदन प्रस्तुत करेंगे और रजिस्ट्री द्वारा प्राप्त होने पर ऐसी प्रतिवेदनों को न्यायालय के समक्ष रखा जाएगा।

पश्चिम बंगाल राज्य कई वर्षों से अपने नियंत्रण संबंधी बकाया राशि का भुगतान नहीं कर रहा है। हालांकि बिहार राज्य के अधिवक्ता ने हिसाब-किताब प्रस्तुत करने का वचन दिया था, लेकिन अभी तक ऐसा नहीं किया गया है। समिति यह सुनिश्चित करेगी कि 15 दिसंबर, 1988 तक पश्चिम बंगाल राज्य को हिसाब-किताब प्रस्तुत कर दिया जाए। अपने शपथपत्र में पश्चिम बंगाल राज्य ने संकेत दिया है कि वह चालू वित्तीय वर्ष में बकाया राशि में से 20 लाख रुपये का भुगतान करेगा और शेष राशि का भुगतान उचित किस्तों में करेगा। अस्पताल के सुधार में भारी व्यय शामिल होगा, इसलिए हम पश्चिम बंगाल राज्य को निर्देश देते हैं कि वह अपने बकाया में से 50 लाख रुपये 31 मार्च, 1989 तक अदा करे और शेष राशि दो छह-मासिक किस्तों में अदा की जाए, पहली किस्त 30 सितंबर, 1989 तक और दूसरी 31 मार्च, 1990 तक। पश्चिम बंगाल सरकार और समिति यह सुनिश्चित करेंगे कि इस समय-सीमा का पालन किया जाए। पश्चिम बंगाल सरकार से वसूल की गई संपूर्ण बकाया राशि अस्पताल के विकास के लिए निर्धारित की जाएगी और समिति द्वारा अनुमोदित तरीके से खर्च की जाएगी, और इसका कोई भी हिस्सा अन्य किसी काम में नहीं लगाया जाएगा।

हमारा मानना है कि यदि अस्पताल को बेंगलुरु में एन.आई.एम.एच.ए.एन.एस. द्वारा संचालित अस्पताल की तरह बेहतर बनाया जाए, तो अस्पताल की गुणवत्ता में सुधार होगा और मरीजों को आधुनिक वैज्ञानिक उपचार का लाभ मिलेगा। इसलिए समिति रांची स्थित

मानसिक अस्पताल को बेंगलुरु में एन.आई.एम.एच.ए.एन.एस. द्वारा संचालित अस्पताल के अनुरूप बनाने की संभावना तलाशने के लिए आवश्यक कदम उठाएगी और फरवरी 1989 के अंत तक इस न्यायालय को एक प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगी, जब संबंधित राज्य सरकारों और पक्षों को सुनने के बाद इस प्रश्न पर इस न्यायालय द्वारा विचार किया जाएगा। बिहार राज्य 31 मार्च 1989 को समाप्त होने वाले वर्ष में 50 लाख रुपये की एक बुनियादी निधि प्रदान करेगा, जिसे समिति द्वारा अनुमोदित तरीके से अस्पताल के सुधार के लिए खर्च किया जाएगा और यदि समिति को लगता है कि अतिरिक्त निधि की आवश्यकता है, तो समिति इस न्यायालय को एक प्रतिवेदन प्रस्तुत कर सकती है, जिसके बाद उचित निर्देश दिए जाएंगे।

बार-बार यह आरोप लगाया गया है कि जो महिला मरीज़ ठीक हो चुकी हैं, उन्हें अस्पताल से छुट्टी नहीं दी जा रही है। एक समय अस्पताल अधिकारियों और राज्य प्रशासन द्वारा यह स्पष्टीकरण दिया गया कि परिजनों को सूचित किए जाने के बावजूद वे उन्हें वापस नहीं ले जा रहे हैं। अस्पताल ऐसी जगह नहीं है जहाँ ठीक हुए लोगों को रहने दिया जाए। इसलिए यह आवश्यक है कि जो लोग ठीक होने के बाद अपने परिवारों के पास लौटने या स्वयं उपयोगी रोज़गार खोजने में असमर्थ हैं, उनके लिए एक पुनर्वास केंद्र स्थापित किया जाए। अतः समिति रांची के आसपास किसी सुविधाजनक स्थान पर पुनर्वास केंद्र स्थापित करने के लिए तत्काल कदम उठाएगी, जहाँ उचित पुनर्वास योजनाएँ चलाई जा सकें और ठीक होने के बाद, चाहे वे पुरुष हों या महिला, यदि उनके परिवार के सदस्य उन्हें वापस नहीं ले जा रहे हैं, तो उनका पुनर्वास किया जा सके। समिति को उपलब्ध कराई गई धनराशि का उपयोग इसी उद्देश्य के लिए किया जा सकता है।

हम यह दोहराना चाहते हैं कि वर्तमान जैसी संस्था की न्यायालय द्वारा निगरानी करना वास्तव में कठिन है, लेकिन जिन कारणों का हमने पहले ही उल्लेख किया है, उनके चलते हम इस स्तर पर कार्यवाही बंद नहीं कर सकते। समिति सहित सभी पक्षों को समय-

समय पर इस न्यायालय में अपील करने की स्वतंत्रता होगी। हम यह स्पष्ट करते हैं कि निधियों के भुगतान संबंधी निर्देश पूर्वव्यापी प्रकृति के हैं और इनमें संशोधन के लिए कोई आवेदन स्वीकार नहीं किया जाएगा।

इस मामले को समिति की विभिन्न प्रतिवेदनों पर विचार करने और अन्य निर्देश देने के उद्देश्य से लंबित माना जाएगा।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।